Vol.10April'17 No.9
Annual Subscription : Rs 100
Rs. 10/- per copy

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

A Monthly publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

Brahmasha India Vedic Research Foundation
ब्रह्माशा इंडिया वैदिक रिसर्च फाउन्डेशन

स्वागत है नव सम्वत्सर

शिव अवतार सरस

हिन्दी-हिन्दू हित चिन्तन में, स्वागत है नव सम्वत्सर।
संस्कार-संस्कृति चर्चा का मिला आज अनुपम अवसर।।
सृष्टिसृजन का आदि-दिवस है, हुआ राम का था अभिषेक।
धर्मराज ने गद्‌दी पायी, शकहूणों का हुआ निषेध।।
वेद पढ़े फिर दयानन्द ने, किया स्थापित आर्यसमाज।
लिखे वेद के भाष्य दिया, था, बृहद् ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश।।
'राष्ट्र' धर्म के संरक्षण को, हुए आज ही हम तत्पर।
हिन्दी-हिन्दू हित चिन्तन में, स्वागत है नव सम्वत्सर।।

पतझड़ बीता ऋतु वसन्त में, होली-होला है खेला।
नवल-वर्ष में नवल-हर्ष से, जुड़ा आज अद्‌भुत् मेला।।
नये वर्ष में सब नवान्न से रचें रचाएँ रंगोली।
होम-हवन-यज्ञादि करें, शुभ अग्निहोत्र से हो होली।।
सिंहनाद कर बिगुल बजा दें, गूँज उठे धरती अम्बर।
हिन्दी-हिन्दू हित चिन्तन में, स्वागत है नव सम्वत्सर।।
सम्वत् उन्नीस सौ छियालीस में ज़न्म लिया था हेडगेवार।
आर.एस.एस. संस्थापक द्वारा किये स्वयं सेवक तैयार।।
बिना संगठन नहीं सुरक्षा, भय से अरिदल दूर भगे।
इसीलिये यह बनी कहावत-संघे शक्ति कलौयुगे।।
आँख तीसरी खोल उपस्थित होंगे निश्चित प्रलयंकर।
हिन्दी-हिन्दू हित चिन्तन में, स्वागत है नव सम्वत्सर।।

मालती नगर, मुरादाबाद (उ.प्र.)

BRAHMASHA INDIA VEDIC RESEARCH FOUNDATION

C2A/58, Janakpuri,
New Delhi-110058
Tel :- 25525128, 9313749812
email:deeukhal@yahoo.co.uk
brahmasha@gmail.com
Website : www.thearyasamaj.org
of Delhi Arya Pratinidhi Sabha
Sh. B.D. Ukhul
Secretary
Dr. B.B. Vidyalankar 0124-4948597
President
Col.(Dr.) Dalmir Singh (Retd.)
V.President
Dr. Mahendra Gupta *V.President*
Ms. Deepti Malhotra
Treasurer
Editorial Board
Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar,
Editor
Dr. Harish Chandra
Dr. Mahendra Gupta
Acharya Gyaneshwararya

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र दिल्ली ही होगा।

Printed & Published by
B.D. Ukhul for Brahmasha India Vedic Research Foundation
Under D.C.P.
License No. F2 (B-39) Press/2007
R.N.I. Reg. No. DELBIL/2007/22062
Price : Rs. 10.00 per copy
Annual Subscription : Rs. 100.00

Brahmarpan April'17 Vol. 10 No.9
चैत्र-वैशाख 2074 वि.संवत्

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

A bilingual Publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

CONTENTS

1. स्वागत है नव सम्वत्सर 2
-शिव अवतार सरस
2. संपादकीय 4
3. सांख्य दर्शन 7
-डॉ. भारत भूषण
4. हिन्दू नववर्ष का इतिहास व महत्त्व 8
5. श्रीराम का प्रेरक स्वरूप 10
-डॉ. महेश विद्यालंकार
6 स्वातन्त्र्यवीर सावरकर के अन्तिम दिन 14
7. डॉ. राम मनोहर लोहिया की दृष्टि में सावरकर 21
8. भारतवर्ष ही आर्यों की मूल भूमि है 23
-संदीप आर्य
9. भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ 27
-आचार्य नरदेव शास्त्री 'वेदतीर्थ'

संपादकीय

चुनाव की दशा और दिशा

देश के पाँच राज्यों में मध्यावधि चुनाव हुए हैं। इनमें चार राज्य छोटे हैं, इसलिए उनका विशेष महत्त्व नहीं है। ये चार राज्य हैं–गोआ, उत्तराखंड, मणिपुर और पंजाब। पाँचवाँ राज्य उत्तरप्रदेश है जो आकार में बड़ा है वही भारत के सभी राज्यों से अधिक महत्त्वपूर्ण है।

भारत एक प्रजातंत्र राष्ट्र है। अतः यहाँ होने वाले चुनावों का विशेष महत्त्व है। यहाँ के चुनाव अन्य देशों के लिए अनुकरणीय हैं, इसीलिए इनमें शालीनता और सभ्य व्यवहार की अपेक्षा की जाती है। परन्तु इस बार जो जनसभाएँ (रैलियाँ) आयोजित हुईं उनका स्तर अपेक्षित स्तर से घटिया था। विभिन्न दलों के नेताओं ने विपक्षी पार्टियों पर जिस प्रकार के आक्षेप किए वे निन्दनीय हैं। इसमें कोई भी दल अपवाद नहीं कहा जा सकता। सामान्यतः सर्वत्र चुनावों में यह अपेक्षा की जाती है कि सभी दल नैतिकता का सामान्य स्तर कायम रखेंगे, परन्तु इस बार सभी दलों ने विरोधियों पर कटु आक्षेप किए और चुनाव आयोग द्वारा निर्धारित आचरण संहिता की सीमा का उल्लंघन किया और चुनाव में विभिन्न दलों ने साम्प्रदायिक बातों का उल्लेख किया और व्यक्तिगत आक्षेप किए। दलों के उच्चतम नेताओं ने दूसरी पार्टियों के नेताओं के बारे में अपशब्द कहे और अशोभनीय टिप्पणियाँ कीं। एक पार्टी खुले तौर पर दलितों और मुसलमानों से उनकी पार्टी को मत देने का अनुरोध कर

रही थी। दूसरी पार्टी पूर्वांचल के लोगों से उन्हें वोट देने की माँग कर रही थी। कुछ पार्टियों के नेता प्रचार के दौरान दूसरी पार्टी के नेताओं को घोटालेबाज, हाथी, गैंडा, गधा, किन्नर आदि नकारात्मक नामों से संबोधित कर रहे थे। उन्हें घूसखोर, माफिया समर्थक, दलित-अल्पसंख्यक विरोधी, साम्प्रदायिक आदि कहकर उन वर्गों को ऐसी पार्टियों को वोट न देने का आग्रह कर रही थीं। इस प्रकार चुनाव में खुले तौर पर आचार-संहिता का उल्लंघन हो रहा था। चुनाव आयुक्त लाचार हैं। वे इन दलों के संबंधित व्यक्तियों पर आवश्यक कार्यवाही करने का नोटिस मात्र दे सकते हैं। इससे हमारे कुछ नेताओं की चारित्रिक अपरिपक्वता का पता चलता है। कुछ पार्टियों के नेता देश के प्रधानमंत्री के विरुद्ध ऐसे आरोप लगाते हैं जो अशोभनीय हैं। एक पार्टी के नेता ने विरोधी शासित राज्य में कब्रिस्तान के साथ श्मशान घाट न होने पर आपत्ति की। इस आपत्ति से मतदाताओं का क्या लेना-देना। इसमें संदेह नहीं कि रैली में ऐसी टिप्पणियों से जनता का मनोरंजन जरूर होता है अन्यथा इसका कोई विशेष प्रयोजन नहीं।

काँग्रेस उपाध्यक्ष प्रधानमंत्री के वस्त्रों पर बार-बार टिप्पणी करते हैं जिसकी आवश्यकता नहीं है। इतना ही नहीं किसी भी अवसर पर श्री मोदी कोई बात कहते हैं तो वे जरूर उसका उल्टा मतलब निकाल कर उनका मज़ाक उड़ाते हैं। यह उनकी अपरिपक्वता दिखाता है जिसे सभी अनुचित समझते हैं। सुश्री मायावती, मुख्यमंत्री अखिलेश यादव, शिवसेना प्रमुख उद्धव ठाकरे आदि नेता अपनी सीमाओं का ध्यान रखें और बिना सोचे-समझे वे

देश के प्रधानमंत्री पर अशोभनीय टिप्पणियाँ न करें। नेता लोग अपनी रैलियों को आकर्षक बनाने के लिए अपने भाषणों में कुछ मसाला डालने की कोशिश करते हैं ताकि जनता का मनोरंजन भी हो। यदि हम यहाँ के नेताओं के भाषणों की तुलना ब्रिटिश नेताओं के भाषणों से करें तो हमें उनके भाषणों में शालीनता की झलक मिलती है। उनके व्यंग्य और परिहास से उनके कथन को बल मिलता है। वह किसी को चुभता नहीं।

हम राजनीति को स्वच्छता प्रदान करने की बात तो करते हैं परन्तु हम उस दिशा में सार्थक प्रयास नहीं करते। नेता अपने भाषणों में ऐसी भाषा और मुहावरों का प्रयोग करते हैं जो विरोधी को चुभते हैं। नेताओं के भाषणों में सांप्रदायिक, विद्वेषपूर्ण टिप्पणियाँ, यौन संबंधों के अशोभनीय विचारों की अभिव्यक्ति, भद्दे जातिवादी कथन और व्यक्तिपरक आक्षेप पाए जाते हैं। एक परिपक्व लोकतंत्र में ऐसे विचार हमारी प्रतिष्ठा नहीं बढ़ाते।

चाहे चुनावी हल्के-फुल्के भाषणों से कुछ समय के लिए श्रोताओं का मनोरंजन हो जाता हो, लोग ऐसे घटिया भाषणों की निन्दा ही करते हैं, उनका मज़ाक उड़ाते हैं। सामान्यतः लोग देश के नेताओं से शालीनता और शिष्टाचार की अपेक्षा करते हैं।

चुनाव में पार्टियाँ अपने शासनकाल की उपलब्धियों का उल्लेख करें और भावी कार्ययोजनाओं का विवरण दें। जनता के लाभ के लिए किए गए कार्यक्रमों की रूपरेखा प्रस्तुत करें। चुनाव सभाओं की यही उपयोगिता है।

संपादक

सांख्य दर्शन (अध्याय-1, सूत्र-111)

-डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार

चेतन को नित्य व स्वतः सिद्ध मनाने पर क्या चेतन उस तत्त्व का धर्म मानना चाहिए और धर्मी उससे अतिरिक्त अथवा चेतन उसका स्वरूप होना चाहिए? सूत्रकार इसका समाधान अगले सूत्र में करता है, सूत्र है-

निर्गुणत्वान्न चिद्धर्मा।।111।।

अर्थ-(निर्गुणत्वात्) निर्गुण होने से, (आत्मा) चिद्धर्मा) चित् धर्म वाला (न) नहीं है।

भावार्थ- सांख्य में 'गुण' पद सत्व, रजस्, तमस् के लिए परिभाषित है। धर्म-धर्मी की कल्पना गुणों में की गई है, जहाँ कार्यकारणभाव अथवा उपादानो पादेयभाव के आधार पर उन दोनों के भेदाभेद को स्वीकार किया जाता है। परन्तु चेतन तत्त्व निर्गुण है अर्थात् त्रिगुणात्मक तत्त्व से भिन्न है। इसलिए चेतन में धर्म-धर्मी की कल्पना संभव नहीं। अतः आत्मा चिन्मात्र है, चिद्धर्मा नहीं। चित् अथवा चिति उसका स्वरूप है। उससे अतिरिक्त आत्मा अथवा चेतन का कोई अस्तित्व नहीं।

दी हिबिस्कस,
बिल्डिंग-5, एपार्ट नं.-9बी
सेक्टर-50, गुड़गाँव (हरियाणा) 122009
फोन-0124-4948597

हमारा राष्ट्रीय कर्त्तव्य

हम और आपको अति उचित है कि जिस देश के पदार्थ
से अपना शरीर बना,
अब भी पालन होता है, आगे होगा,
उसकी उन्नति तन-मन-धन से
सब जने मिल के प्रीति से करें।

स्वामी दयानन्द सरस्वती

हिन्दू नववर्ष का इतिहास व महत्त्व

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को हमारा नववर्ष है। भारतीय नववर्ष का ऐतिहासिक महत्त्व:

1.यह दिन सृष्टि रचना का पहला दिन है। इस दिन से एक अरब 96 करोड़ 85 लाख 3 हजार 116 वर्ष पूर्व इसी दिन के सूर्योदय से ब्रह्माजी ने जगत की रचना की।

2. इसी दिन धर्मराज युधिष्ठिर का राज तिलक हुआ।

3. विक्रमी संवत का पहला दिन : उसी राजा के नाम पर संवत् प्रारंभ होता था जिसके राज्य में न कोई चोर हो, न अपराधी हो और न ही कोई भिखारी हो। साथ ही राजा चक्रवर्ती सम्राट भी हो। सम्राट् विक्रमादित्य ने 2072 वर्ष पहले इसी दिन राज्य स्थापित किया था।

4. श्री राम का राज्याभिषेक दिवस : प्रभु राम ने भी इसी दिन को लंका विजय के बाद अयोध्या में राज्याभिषेक के लिए चुना।

5. महर्षि दयानंद द्वारा 1875 ई. में आर्यसमाज की स्थापना की गई।

6. फसल पकने का प्रारंभ यानि किसान की मेहनत का फल मिलने का भी यही समय होता है।

7. नक्षत्र शुभ स्थिति में होते हैं अर्थात् किसी भी कार्य को प्रारंभ करने के लिए यह शुभ मुहूर्त होता है।

8. इस दिन चेती चाँद/उगादी/गुड़ी पड़वा का पर्व मनाते हैं। नववर्ष मनाने की विधि में भी हम यह अंतर देखते हैं। पश्चिमी सभ्यता में नववर्ष को मनाने में अधिक से अधिक भोग का भाव रहता है। नशे को आनन्द का पर्याय समझा जाता है। इसलिए इसका जश्न रात को मनाया जाता है। यह सोच का अंतर है। धार्मिक अनुष्ठान, परस्पर स्नेहाभिव्यक्ति के लिए कलात्मक अनुरंजन, सृष्टि का स्वागत, स्वास्थ्यवर्द्धक

खानपान ऐसे वैज्ञानिक परम्पराओं का निर्माण इस पर्व के लिए भारत में हुआ। ऋतु परिवर्तन को ध्यान में रखकर कर्मकांड विकसित हुए। भोग को नहीं त्याग को आनन्द का स्थायी माध्यम बनाया गया। यह काल की वैज्ञानिक समझ ही है कि जिसमें हम वर्षप्रतिपदा को सालभर के मुहुर्तों में से एक मानते हैं। इस दिन शुभकार्य के लिए अलग से मुहुर्त देखने की जरूरत नहीं है। सारी सृष्टि ही आपके शुभसंकल्प का साथ दे रही होती है। प्राण का प्रवाह ही ऐसा होता है कि जो मन में शिवसंकल्प लेंगे वह अवश्य पूर्ण होगा।

स्वदेशाभिमान की कमी के कारण ही हम इस पूर्णतः वैज्ञानिक कालगणना को छोड़ अपूर्ण, अशास्त्रीय व शोषण को प्रोत्साहन देनेवाली व्यवस्था के अधीन हो गए हैं। हम भारतवासी यह भी नहीं जानते कि हमने संवैधानिक रूप से जो राष्ट्रीय पंचांग स्वीकार किया है वह भी हिन्दू कालगणना ही है। आइए! इस नववर्ष पर हम संकल्प लें कि अपने दैनिक व्यवहार में राष्ट्रीय पंचांग का प्रयोग करेंगे। विश्व मानवता को विनाश से बचाने के लिए भारतमाता को समर्थ बनाने का प्रारम्भ स्वाभिमान के साथ करें। सोच बदलेगी तब तो कृति में परिवर्तन आयेगा। भोग के स्थान पर त्याग के द्वारा सार्थक उपयोग, सृष्टि के शोषण के स्थान पर संवेदनशील दोहन और कुछ सुयोग्यों को जीने के अधिकार के स्थान पर 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' सबके सुखी होने की संकल्पना पर आधारित विश्वव्यवस्था का पुनर्निर्माण भारत से ही होगा। इसका शुभारम्भ इस युगादि को करें। आज के दिन सबको शुभकामनाएँ देते समय केवल नववर्ष ही कहें। वर्षप्रतिपदा तो सारी सृष्टि का नववर्ष है। हिन्दू नववर्ष ही वास्तविक नववर्ष है।

श्रीराम का प्रेरक स्वरूप

-डॉ. महेश विद्यालंकार

इस देश का सौभाग्य है कि यहाँ अनेक ऋषि-मुनि, सन्त-योगी, तपस्वी, त्यागी और बलिदानी महापुरुषों ने जन्म लिया है। महापुरुष किसी देश की सबसे बड़ी सम्पदा होते हैं। उन्हीं महापुरुषों की परम्परा में मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्रीराम का स्मरण और नाम बड़ी श्रद्धा, भक्ति, सम्मान तथा आदर से लिया जाता है।

श्रीराम भारत के रोम-रोम और कण-कण में रमे हुए हैं। भारतीय संस्कृति पर श्रीराम की अमिट छाप है। श्रीराम का जीवन भारत का आदर्श जीवन माना जाता है। श्रीराम एक आदर्श महापुरुष थे। उनका व्यक्तित्व और कृतित्व महान था। उनमें मानवोचित और देवोचित गुण थे। इसीलिए वे "मर्यादा पुरुषोत्तम" कहलाए।

हजारों वर्षों से कोटि-कोटि जन-मानस के प्रेरक राम का जीवन आदर्श एवं अनुकरणीय है। श्रीराम का चरित्र और आदर्श जीवन भारत की सीमाओं को लाँघकर विदेशियों के लिए भी शान्ति, प्रेरणा और नवजीवन का दाता बनता जा रहा है। आज शिक्षित अशिक्षित सभी उठते-बैठते, सोते-जागते, खाते-पीते राम का नाम लेकर ही अपनी धार्मिक भावना प्रकट करते हैं। हमारा सौभाग्य है कि हम ऐसे दिव्यात्मा मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र की परम्पराओं से सम्बन्ध रखते हैं। श्रीराम की स्मृति में ही हम प्रतिवर्ष रामनवमी और विजयदशमी के पर्व मनाते हैं, किन्तु श्रीराम हमारे व्यवहारों में नहीं दिखाई देते हैं। श्रीराम का प्रेरक चरित्र, जीवन, गुण, कर्म, स्वभाव और आदर्श सार्वकालिक, सार्वजनिक, सार्वदेशिक और सार्वभौम हैं। वे हर युग मे नित्य नूतन, प्रेरक, उद्‌बोधक एवं सन्मार्ग-दर्शक हैं। आज भी श्रीराम के जीवन की घटनाएँ एवं आचरण लक्ष्यविहीन हिन्दू जाति के लिए प्रकाशस्तम्भ हैं। चाहे वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, धार्मिक, आर्थिक या अन्तर्राष्ट्रीय, कैसी भी समस्याएँ हों, हर जगह राम की रीति, नीति, एवं व्यवहार उनके समाधान का मार्ग प्रशस्त करती हैं। उनका

सम्पूर्ण जीवन मानवता के लिए प्रेरक है।
राम युगों से जीवन्त चेतना के पुंज थे। उनके द्वारा दर्शित आदर्शों का ही कुछ विकृत रूप आज भारतीय समाज है। केवल उनके आदर्श चरित्र का विकृत और अश्लील हरकतों से भद्दा प्रदर्शन व रामलीलाएँ कर लेना हमारी बौद्धिक दरिद्रता के परिचायक हैं।
हमें आज इस भोगी, विलासी, भौतिक एवं तेजी से टूटते सभी आदर्शों, परम्पराओं, मान्यताओं तथा अनैतिक मूल्यों के वातावरण में युगपुरुष श्रीराम के आदर्शों एवं मान्यताओं की व जीवन-मूल्यों की महती आवश्यकता है। इन आदर्शों को अपनाकर ही यह हिन्दू (आर्य) जाति बच सकती है। राम के जीवन को प्रत्येक घटना के पीछे समग्र मानव-जाति के लिए अमर सन्देश भरे पड़े हैं। आओ, हम उन तक पहुँचे, उन्हें समझें और जीवन में उतारें, तभी राम का सच्चा स्मरण सार्थक होगा। रामायण के आरम्भ में श्रीरामचन्द्र जी के जन्म का वृत्तान्त है। राजा दशरथ ने पुत्रेष्टि यज्ञ किया। इसमें अनेक विद्वानों, ब्राह्मणों और ऋषि-मुनियों ने भाग लिया। यज्ञ सम्पन्न हुआ। दशरथ का घर सन्तान-सुख से भर गया। इससे बोध होता है व प्रेरणा मिलती है कि यज्ञ मानव की सभी कामनाओं की पूर्ति का श्रेष्ठ साधन रहा है। यज्ञ हमारी संस्कृति की बहुत बड़ी विशेषता है।
राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न बड़े हुए तो गुरुकुल में शिक्षा के लिए भेजे गए, जहाँ सबको समान शिक्षा मिली। कोई भेदभाव नहीं, धनवान् और निर्धन का कोई प्रश्न नहीं था। विद्या जीवन को उच्च, श्रेष्ठ और महान बनाती है। आज के समाज में शिक्षा का अर्थ बदल गया है। वर्तमान शिक्षा में असमानता, महँगापन, आदर्शहीनता, जीवन से दूरी, अपनी सभ्यता संस्कृति से घृणा आदि अवगुण आ रहे हैं। राम का चरित्र इस भयंकर दिशाहीन शिक्षा-जगत् को चेतना एवं प्रेरणा दे रहा है कि शिक्षा सब के लिए एक जैसी हो। गुरु की दृष्टि में धनवान-निर्धन विद्यार्थी बराबर हों। शिक्षा चरित्र, जीवन और संस्कारों से जुड़ी हो शिक्षा में मानव को मानव बनाने वाले विचार हों। शिक्षा-स्थल प्रकृति की गोद में हो, जिससे विद्यार्थी

विषय-वासना, शृंगार और दुर्व्यसनों से बच सकें। शिक्षा से ही राम के चरित्र में दैवीय गुणों का विकास हुआ।

शिक्षा के बाद राम यज्ञ के रक्षार्थ महर्षि विश्वामित्र के साथ वन जाते हैं। इस घटना से संकेत मिलता है कि प्राचीनकाल में क्षत्रिय बालक कितने बलशाली, पराक्रमी, निर्भीक और ब्रह्मचर्य के व्रती होते थे। छोटी सी आयु में राम और उसके भाई ने ताड़का राक्षसी और कई उपद्रवी राक्षसों को मारा। उसके बाद राम और लक्ष्मण महर्षि विश्वामित्र के साथ मिथिला जाते हैं। यहीं विवाह का वर्णन होता है। उस काल में स्वयंवर की प्रथा थी। नारी को अपना साथी चुनने का पूर्ण अधिकार था। वर और वधू ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए गृहस्थाश्रम को सुख से व्यतीत करते थे। विवाह भोग-विलास के लिए न होकर श्रेष्ठ कर्मों और सन्तान-प्राप्ति के लिए होता था। राम के विवाह के आदर्श से आज के मानव को प्रेरणा और आदर्श मिलता है कि विवाह गुण, कर्म और स्वभाव के आधार पर करें। विवाह किसी लालच या स्वार्थ से प्रेरित होकर न करें। वर-वधू में समानता हो। बाल-विवाह का विरोध करें। नारी भी पुरुष के समान अपने अधिकार के लिए स्वतन्त्र हो। सीता अपने कर्त्तव्यों, मर्यादाओं तथा शालीनता से कभी विमुख नहीं हुई तभी तो वे जगजननी कहलाईं। विवाहोपरान्त राम के राज्याभिषेक का उल्लेख है, परन्तु कैकेयी के आदेश से राम को वन में जाना पड़ता है। श्रीराम के असहज वियोग में राजा दशरथ की मृत्यु हो जाती है। इससे स्पष्ट है कि कैकेयी ने जो मन्थरा की सलाह मानी, वह प्रसंग आज के नर-नारी को सचेत करता है कि नीच, बुरे विचारों, कुसंस्कारों और कुकर्म वाले की संगति सदैव पतन और दुःख का कारण बनती है। कुसंग से कार्य बिगड़ता है। सत्संग से व्यक्ति सुधरता है।

राजा दशरथ ने मृत्यु को स्वीकार किया किन्तु वचन से विचलित नहीं हुए। इससे आज के मानव को वचन-निर्वाह की शिक्षा मिलती है कि दशरथ ने अपने प्राण-प्रिय राम को वनवास दियां किन्तु अपने वचन से डगमगाए नहीं।

भर्तृहरि ने भी कहा है–'न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।' महान् व्यक्ति न्याय के पथ से टस से मस नहीं होते हैं। राम के वनगमन का प्रसंग बड़ा ही मार्मिक और कारुणिक है। राम आदर्श पुरुष थे। उन्हें न राजतिलक होने का हर्ष था, न वन जाने का विषाद। राम का कथन है– 'मैं पिता की आज्ञा से समुद्र में कूदने, पहाड़ से छलांग लगाने और अग्नि में प्रवेश करने के लिए भी हमेशा तैयार हूँ। ये वाक्य राम की पितृभक्ति को युगों तक जीवित बनाए रखेंगे। आज मानव-समाज में विकट समस्या है कि बच्चे अपने माता-पिता का कहना नहीं मानते। अनुशासन में नहीं रहते। इस समस्या के समाधान में राम का चरित्र आज की युवा पीढ़ी के लिए अनुकरणीय है।

इसी प्रसंग में सीता का वन में साथ जाना इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ देता है। वनवास राम को मिला था, सीता को नहीं, फिर भी सीता पति की अनुगामिनी बनी। सीता का यह कथन– 'पतिदेव! यह कैसे हो सकता है कि आप तो वनों में रहें और मैं अयोध्या के महलों में अमन चैन से रहूँ, आपके बिना मेरे लिए स्वर्ग का वैभव भी तुच्छ है। मैं छाया की भाँति आपके साथ रहूँगी।" सीता का यह पवित्र पतिव्रत धर्म आज की भोग-विलास तथा श्रृंगार में फँसी नारी को युग-युग तक प्रकाश एवं जीवन दे सकता है। सीता ने अधिकार नहीं, कर्त्तव्य को देखा। हमारी संस्कृति में कर्त्तव्य को अधिकार से ऊँचा माना गया है। जहाँ अधिकार की भावना है, वहाँ दुःख, कलह व अशान्ति है।

इसी सन्दर्भ में लक्ष्मण का भाई हेतु वनगमन भाइयों की प्रीति का उत्कृष्ट प्रमाण है। ऐसी मधुर, प्रगाढ़ एवं त्यागमयी प्रीति आज के मानव को, जो भाई-भाई के रक्त का प्यासा हो रहा है, बहुत कुछ सोचने के लिए दे सकती है। श्रीराम तथा लक्ष्मण का प्रेम भातृ-प्रेम का आदर्श उदाहरण माना जाता है। टूटते हुए पारिवारिक सम्बन्धों को राम, लक्ष्मण और भरत जैसा प्रेमपूर्ण त्याग ही जोड़ सकता है।

बी.जे.29, पं. शालीमार बाग, दिल्ली-27

स्वातन्त्र्यवीर सावरकर के अन्तिम दिन

20 अक्तूबर, 1962 के दिन चीनी आक्रमण के समाचार को सुनकर वीरसावरकर दुःखी होकर बोले- "सैकड़ों वर्षों के दीर्घ प्रयत्न के बाद मिली हुई स्वतन्त्रता को ये शासक अपने दोषपूर्ण राजनीति और अव्यवहारी सिद्धान्तों के कारण फिर खो बैठेंगे।" पर 1965 में श्री शास्त्री जी ने समय पर ही सावधान होकर कश्मीर से लेकर कच्छ तक सैनिकों की एक अभेद्य दीवार खड़ी करके भारतीय सेना को आगे बढ़ने का जो आदेश दिया और भारतीय वीरों ने लाहौर तक मंजिल तय कर ली और पाक सेना, पाकटैंक और उनके विमानों को चूर-चूर करके 22 अगस्त से 22 सितम्बर तक जो अद्‌भुत पराक्रम दिखाया, उस विजय का समाचार सुनते ही वीरसावरकर आनन्द में विभोर हो गए। उनके उस आनन्द का वर्णन हम किन शब्दों में करें?

ताशकन्द करार के बाद उदासीनता

उस समय भी रुग्ण शय्या पर पड़े हुए वीर सावरकर ने कहा कि - "यह दिन देख कर मुझे जो आनन्द होता है, उसे शब्दों में मैं कैसे व्यक्त करूँ?" वे बीमार थे फिर भी पाक सेना के पीछे हटने और उनके भयंकार विनाश का समाचार जोर-जोर से पढ़ते थे। नक्शे पर उँगली रख कर वे कहते कि- "इस जगह शत्रु जंगल में फँस जाएगा, जल्दी करो, एक बार लाहौर हाथ में आ जाये तो फिर रावलपिंडी क्या काबुल तक हम मंजिल मार सकते हैं।" वीर सावरकर का यह आवेश किसी सम्राट् के आवेश के समान था। पर शस्त्र-संधि की भाषा के शुरु होते ही सावरकर बोले- "शूर जवानों ने जो प्राप्त किया उसे तथाकथित नेता गँवा बैठेंगे।" आखिरकार यह शस्त्र-संधि हुई। ताशकन्द वार्ता के शुरू होने के साथ ही सावरकर जी का मन उदासीनता से भर गया। इसी उदासीनता के कारण उन्होंने आत्म-समर्पण भी कर दिया।

चाय में दवा देते हो तो चाय भी नहीं पीऊँगा

26 जनवरी, 66 के बाद वीर सावरकर का स्वास्थ्य धीरे-धीरे क्षीण होने लगा। डॉक्टर चिन्ता में पड़ गए। स्वातन्त्र्यवीर दवा नहीं लेते तो क्या करें? दूसरे किसी उपाय से यदि दवा पेट में जाये, तो अत्यन्त उत्तम होगा, यह सोचकर 29 से 31 तारीख तक चाय में दवा दी गई। इससे स्वातन्त्र्य-वीर को सन्देह हो गया। एक दिन उन्होंने पूछ ही लिया कि क्या चाय का चूरा बदल दिया है? पर उत्तर नकारात्मक ही मिला। वस्तुतः पाचनशक्ति की क्षीणता को छोड़कर और कोई विकार उनमें नहीं था। सभी ज्ञानेन्द्रियाँ उत्तम थीं। अतः उनके मन में यह सन्देह पैदा हो गया कि डॉक्टर उनसे कुछ छिपा रहे हैं। तर्कनिष्ठ और बुद्धिवादी मनुष्य को फँसाना बड़ा कठिन काम है। वही बात यहाँ भी हुई।

3 फरवरी से स्वातन्त्र्य-वीर ने चाय पीनी भी बन्द कर दी। केवल थोड़ा-सा पानी पीना, अखबार पढ़ना या सुनना, रोज की तरह दाढ़ी बनाना, शरीर पोंछवा लेना, आई डाक देखना, अपने सचिव को उत्तर लिखवाना और थोड़ी बहुत चर्चा करना यह उनका दिनक्रम था। आने जाने वालों की खोज खबर लेना वे कभी नहीं भूलते थे। उनकी बीमारी का समाचार रेडियो और अखबार में आने से पत्रों और तारों की झड़ी सी लग गई जो दिनों-दिन बढ़ती ही चली गई। इन सबका उत्तर देना भी कठिन होने लगा। दर्शकों की भी भीड़ इतनी होने लगी कि सावरकर सदन में जगह की कमी महसूस होने लगी।

"प्रभा से कह दो कि मैं सबेरे उससे मिलूँगा।"

स्वातन्त्र्य वीर ने पानी भी पीना बन्द कर दिया, अतः अन्तिम उपाय सोचकर सौ. प्रभा (पुत्री) और श्री माधवराव चिपलूणकर (दामाद) को दिल्ली से बुला लिया। सौ. प्रभाताई और श्री माधवराव आए। सामान के रखने की सब व्यवस्था होने के बाद तात्याराव बोले-कि "प्रभा से कह दो कि मैं उससे सबेरे मिलूँगा।" हम सब को आशा तो यह थी कि वे सैकड़ों मील

से प्रवास करके आने वाले अपने दामाद एवं पुत्री से तत्काल ही मिलेंगे, पर यह देखकर हमें आश्चर्य ही हुआ। अपनी पुत्री से तत्काल न मिलने का कारण सम्भवत: यही होगा कि कहीं अपने पिता के क्षीण स्वास्थ्य को देखकर बेटी के हृदय को धक्का न पहुँचे।

पूछ-ताछ वह भी बाग के बारे में

दूसरे दिन सबेरे सौ. प्रभा चाय का कप हाथ में लेकर स्वातन्त्र्य-वीर के पास गईं और बोली- "तात्या! तुम मेरे साथ एक प्याली चाय पी लो।" सुनकर तात्याराव बोले, "प्रभे! तू आ गई, बस मुझे सब कुछ मिल गया, अब तू मुझे इस मोह में न डाल।" उनके इस कथन से ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने अपने जाने की दिशा पहले से ही निश्चित कर ली थी। बाद में उन्होंने अपनी पुत्री और नातिन माधुरी से दिल्ली में लगाए गए बाग, उसमें लगाए पौधे, बेल आदि की पूछताछ करनी शुरू कर दी। थे तो वे कवि-हृदय ही। जिन्होंने अपनी कल्पना से गोमांतक काव्य को सजा दिया, कमला को अमर कर दिया और भी अनेक अमर काव्य रचे, उन महाकवि की रुग्णशय्या पर होते हुए भी वृक्ष, लता, पौधे आदि के बारे में पूछताछ करना क्या स्वाभाविक नहीं है?

डॉक्टरों का हृदय भर आया।

स्वातन्त्र्यवीर की बीमारी जैसे-जैसे बढ़ती गई, वैसे-वैसे लोगों की जिज्ञासा भी .बढ़ती गई। डॉक्टरों का मंडल अपने आप ही बन गया। सभी अपने-अपने उपाय करने लगे और किसी भी तरह उन्हें दवा देने की कोशिश करने लगे पर सब व्यर्थ। अब सभी उनके हमेशा के धन्वन्तरि डॉ. साठे (भू.पू. उपकुलपति, मुम्बई विश्वविद्यालय) का रास्ता देखने लगे। डॉ. साठे कहीं मुम्बई से बाहर गए हुए थे। अन्त में एकदिन डॉ. साठे आये, उन्होंने तात्याराव की परीक्षा की। परीक्षा के बाद तात्याराव क्षीण पर दृढ़ स्वर में बोले- "साठे, अब औषध उपचार की कोई आवश्यकता नहीं है। तुम मेरे स्नेही और

अनेक वर्षों से मेरे चिकित्सक रहे हो। अतः मेरी बात सुनो। आज तक मैं तुम्हारी सब बातें मानता आया हूँ। अब मेरी अन्तिम बात सुन लो। मुझे कोई ऐसी दवा दो कि जिसके बाद मुझे फिर न बोलना पड़े।" डॉ. साठे बोले- "मैं ऐसा कैसे कर सकता हूँ। मैं दवा न देने की कोशिश करूँगा।" डॉ. साठे के सहकारी, घर के बाहर निकले और बोले कि "अब उन्हें कोई दवा मत दो। वे लेंगे भी नहीं। पानी खूब पिलाओ। अब उन्हें उनकी इच्छा पर ही रहने दो।"

भावुकों की भावना

तात्याराव के स्वास्थ्य की क्षीणता का समाचार फैलते ही श्री जगद्गुरु शंकराचार्य द्वारकापीठ आदि तथा बच्चों से लेकर बूढ़ों तक सभी चिन्तातुर होकर सावरकर-सदन की ओर आते थे।

"सावरकर जी के दर्शन हो सकेंगे?"

"नहीं"

"तो फिर दूर से ही उनके दर्शन कर लेने दीजिए।"

"वह भी असम्भव है।"

यह उत्तर सुनकर सभी उदास चेहरे से वापस लौट जाते। कुछ भावुक तो सावरकर-सदन की धूल अपने माथे पर चढ़ा कर ही अपने आपको कृत कृत्य मान लेते थे।

सम्पूर्ण गीता बोलने वाली बालिका

18 फरवरी को सबेरे एक गुजराती गृहस्थ ने आकर मुझसे पूछा कि "वीर जी का दर्शन मिलेगा?" मैंने "नहीं"- में उत्तर दिया। उनके साथ एक छः वर्ष की बालिका थी। उसकी ओर इशारा करते हुए उस गृहस्थ ने पूछा-"इसे तो दर्शन मिल सकेगा?" मैंने कहा- "वीर सावरकर जी की नातिन भी तभी अन्दर जाती है जब वे बुलाते हैं। डॉक्टरों ने मना किया है। तब वे बोले- "इस लड़की को सारी गीता याद है। इतना ही नहीं, कोई क्रमांक कहिए, यह वह श्लोक सुना देगी। गीता पर प्रवचन भी करती है। उपनिषद् के वचन भी याद हैं। इससे गीता पाठ करवा लो, उससे स्वातन्त्र्यवीर को भी शान्ति

मिलेगी।" यह सुनते ही मेरा धार्मिक मन जागृत हो गया। उस दिन महाशिवरात्रि थी। "सम्भव है शंकर स्वयं इसी रूप में आये हों। शंकर को भी इस वीर पुरुष के दर्शन करके धन्य होने की इच्छा हो गई हो," इस कल्पना के मन में आते ही उन्हें अन्दर बैठने के लिए कह कर उसे 12वें अध्याय का एक श्लोक सुनाने के लिए कहा। कहने के साथ ही उसके मुँह से श्लोक निकलने शुरु हो गए। उन श्लोकों के उसने गुजराती में अर्थ भी बताए। फिर मैं सब लोगों को बुला लाया। सभी फरमाइश करने लगे और वह लड़की शान्ति से सबकी फरमाइशें पूरी करती जाती थी। सभी आश्चर्य-चकित रह गए। मैंने सौ. प्रभाताइ से उस बालिका को तात्याराव के कमरे में ले जाने के लिए कहा। सब ऊपर गए। तात्याराव आँखें बन्द किए पड़े हुए थे। इसलिए दूर से ही उस लड़की को बता दिया कि "देखो वे हैं सावरकर"। उस बालिका ने हाथ जोड़े और नमस्कार करके उछलती हुई अपने पिता के पास आकर बोली- "मैंने सावरकर जी को देख लिया है।" यह कहते हुए उसे कितना आनन्द हुआ इसका वर्णन मैं नहीं कर सकता।

स्वंयसेवकों को शाप

सभी एक विशेष भावना से स्वातन्त्र्यवीर के दर्शनार्थ आते थे। "मैं अकेला हूँ, केवल दर्शन करूँगा और चला जाऊँगा।"

"ठीक है, पर आप जैसे कहते हैं उतना सरल नहीं है। वीर का स्वभाव ऐसा है कि भले ही तुम न बोलो, फिर वे तुमसे बोले बिना नहीं रहेंगे। क्या नाम है? कहाँ रहते हो? आदि सैकड़ों प्रश्न वे पूछेंगे। तुम जैसे हजारों आयेंगे पर बोलने वाले सावरकर अकेले। बताइये, उन्हें कितना कष्ट होगा।" फिर भी जब वह नहीं जाता तो हमारे सामने समस्या आ खड़ी होती उसे दर्शन कैसे करायें। फिर दूसरा कहता- "मैं कश्मीर से इतनी दूर चलकर आया हूँ, इसका तो ख्याल करो।" फिर तीसरा पूछता कि- "रात में कब सोते हैं?

"जब उन्हें बताया कि रात को 12 बजे वे नींद की गोली खाते

हैं, तभी उन्हें नींद आती है। स्वाभाविक नींद उन्हें नहीं आती।" तो उन्होंने कहा कि "फिर मैं ऐसा करूँगा, कि 12 के बाद आऊँगा और बिना आवाज किये उन्हें देखकर चला जाऊँगा।" इसी तरह के दर्शकों से हमारा पाला पड़ता था। उनमें कुछ जबर्दस्त भी होते थे। एक दिन एक राजस्थानी सज्जन आये पर जब उनसे दर्शन की मनाही कर दी गई तो वे चिढ़ गये और बोले- "आप सब लोग नरक में जाएँगे।"

पुत्री से बातचीत

तात्याराव की आवाज दिनों दिन क्षीण होती जा रही थी। वे जोर से बोलने की कोशिश करते थे पर ध्वनि स्पष्ट नहीं होती थी। उनके मुँह के पास कान ले जाना पड़ता था तब कुछ अस्पष्ट-सी ध्वनि सुनाई देती थी।

एक दिन वे सौ. प्रभा से बोले- "प्रभे! देख, मैं इस प्रकार कितने दिन तक पड़ा रहूँगा, कुछ कहा नहीं जा सकता है कि मैं चार दिन रहूँगा या चार महीने रहूँगा।" तात्याराव की बात सुन कर प्रभाताई की आँखें भर आईं। यह देखकर तात्यराव बोले "आँखें पोंछ। इस प्रकार धैर्य छोड़ने से कैसे काम चलेगा? तेरी माँ भी चली गई। उसको भी भूल ही गई न? जो जन्मता है, वह जाता ही है। इसलिए व्यर्थ शोक करने से क्या फायदा? बाबा चले गये और भी दूसरे कई चले गये, यदि सब के लिए हम रोने बैठें तो यह उमर भी पूरी नहीं पड़ेगी। अब तू ऐसा कर कि दिल्ली जा। वहाँ तेरा बाग सूख जायेगा। यहाँ अकेला प्रफुल्ल रहेगा, उसे धैर्य दे और रो मत।" सुनकर प्रभाताई बोली कि टिकट नहीं मिलते। इस पर तात्याराव ने स्वयं छानबीन करके 'डी-लक्स-एक्सप्रेस" से करवाने के लिए लोगों से कह दिया। इस सबके पीछे स्वातन्त्र्य वीर की इच्छा यह थी कि अन्तिम दृश्य देखकर लड़की को कहीं दुःख न हो।

सरकार की गुप्त पुलिस

सरकार की दक्षता भी ऐसी है कि जहाँ रखनी चाहिए वहाँ

रखती नहीं और जहाँ नहीं चाहिए वहाँ रखती है। उनकी मृत्यु के एक रात्रि पूर्व जब पी.टी.आई.(प्रेस ट्रस्ट ऑफ इण्डिया) ने "सावरकर अति अस्वस्थ' इस शीर्षक के अन्तर्गत समाचार प्रकाशित किया तो सावरकर-सदन की ओर जनसागर उमड़ पड़ा। इस समय भी गुप्त पुलिस का समूह देखकर लोग पूछते थे, "ये गुप्तचर अब यहाँ क्यों हैं? क्या ऐसी हालत में भी स्वातन्त्र्यवीर पर सरकार का सन्देह कायम है? क्या सरकार की यही मानवता है?" यह बात मराठा दैनिक के सम्पादक आचार्य प्र. के. अत्रे की नजरों में आई, उन्होंने उस बात को लेकर अपने दैनिक में सरकार की जो खबर ली तो रातों-रात गुप्त पुलिस का वह समूह चुपके से खिसक गया।

शंकराचार्य का प्रणाम

अब स्वातन्त्र्यवीर का गला भी सूज आया। इतनी यमयातना होने पर भी स्वातन्त्र्यवीर की बुद्धि स्थिर और कार्यरत थी। श्रीमद्शंकाराचार्य द्वारिकापीठ ने सन्देश भेजा कि वे स्वातन्त्र्यवीर के दर्शन के लिए वहाँ आना चाहते हैं। उत्तर में तात्याराव ने लिखा कि- "वस्तुतः तो मुझे ही आपके दर्शनार्थ आना चाहिए था, पर अब वह सम्भव नहीं हैं।" तब शंकराचार्य ने लिखा कि "नियम के अपवाद भी होते हैं।" इस पर फिर तात्याराव ने लिखा कि "आप आइये, पर आपका स्वागत हम लोगों से कैसे होगा।" तब तात्याराव ने हमसे कहा कि उनके लिए फूलमालाएँ तैयार रखो और उनका योग्य स्वागत करो तथा उनसे मेरा प्रणाम कह दो।"

जनता का अथाह प्रेम

स्वातन्त्र्यवीर की अस्वस्थता का समाचार सुनकर मन्दिरों में गुरुद्वारों में, प्रार्थनाएँ होने लगीं। ब्राह्मणों ने सर्वत्र वेदपाठ करना शुरू कर दिया। छोटे बच्चों ने घर के सामने आकर प्रार्थना की और "वीर सावरकर अमर रहें" की घोषणा से दिशायें गूँजा दीं। उन सबकी एक ही इच्छा थी कि स्वातन्त्र्यवीर स्वस्थ हो जायें। यहाँ न जातिभेद था, न दलभेद था, न प्रान्तभेद।

डॉ. राम मनोहर लोहिया की दृष्टि में सावरकर

मार खाना, जेल जाना, जान देना बड़ी बात है। उससे भी बड़ी बात है कि जब लड़ते-लड़ते आदमी गिरफ्तार हो जाए तो खासतौर से अगर गिरफ्तार करने वाले विदेशी हों और प्रदेश में गिरफ्तार हो जाए तो अपनी कैद को कुछ भी न मानकर उनकी परवाह न करके उनसे भाग जाने की कोशिश करना यह और भी बड़ा काम है। बहुत कम आदमी ऐसा कर पाते हैं। लड़ाई के दिनों में जो युद्ध होते हैं यूरोपीय लोगों के आपस में जब कोई सैनिक कैदी हो जाता है तो वह ताक में रहता है कि कैसे मैं भागूँ लेकिन बड़ा कम मौका पाता है। वीर सावरकर जी ने अंग्रेजी सिपाहियों की तनिक भी परवाह न करके और उनसे विदेश में मोर्चा लेकर कैदी की हैसियत से भाग निकलने की जो कोशिश की थी वह एक बड़ी बात थी और उसके लिए हमेशा हिन्दुस्तानी नौजवान उनके प्रति श्रद्धा रखता रहेगा। अफसोस इस बात का है कि आजकल जो इतिहास लिखा जा रहा है एक तो उसको बहुत लोग पढ़ते नहीं, वह अच्छा करते हैं। नव जवान लोग न पढ़ें तो अच्छा है लेकिन जो बातें इस ढंग के इतिहास से सीखी जा सकती है उनकी तरफ ध्यान देना तभी संभव होगा जब इतिहास के दो पहलू ध्यान में रखेंगे और खासतौर से वीर सावरकर खाली बहादुर नहीं थे। इतिहास लेखन में एक जो दृष्टि है कि क्या हम हर परदेशी हमलावर को देश के लिए अच्छा समझेंगे। भारत में जो भी इतिहास लिखा गया परदेशी और परदेशियों के खिलौनों ने लिखा। इसलिए हर हमलावर को अच्छा साबित कर दिया जाता हैं। वह जीतता है तो अपने गुणों के कारण

जीतता है और हम जो हार जाते हैं हम भी अपने गुण के कारण हारते हैं। गुण कौन-सा है-संगम का गुण। हममें समन्वय की बड़ी भारी शक्ति है। हम सबको आत्मसात् बना लिया करते हैं। हार जाते हैं लेकिन हार जाने के बाद उसको अपने मुल्क में जज़्ब कर जाते हैं और फिर जीत जाते हैं। ऐसा कम्बख्त इतिहास जितनी जल्दी खतम किया जाए उतना अच्छा है। वीर सावरकर ने दूसरा रास्ता वह जो इतिहास का रास्ता है कि हमेशा आदमी हारता है, खाली परदेशी के बढ़िया इन्तजाम के कारण नहीं, कभी-कभी हार जाता है अपनी कमजोरी, बदनसीबी, तरह-तरह की बातों से। इसी सिलसिले में मैं आपसे एक निवेदन करूँगा। वीर सावरकर से मेरा कहाँ मतभेद है, वह आज का विषय नहीं बल्कि कहाँ कौन सी बात थी उनकी आखिरी दिनों में भी जो मुझको आज भी अच्छी जँचती है, आगे बढ़ाई जा सकती है उसके बारे में मुझे कहना है। हिन्दू शब्द के दो मतलब मालूम होते हैं। एक तो ऐसा मतलब कि जो हिन्दुस्तान में रहता है, चाहे मुसलमान हो चाहे ईसाई हो, जो कोई हो जैसे हिन्दोस्तान, हिन्दुस्तानी, हिन्दी ये जितने शब्द हैं इनमें वह व्यापक अर्थ आता है, जो इस देश में रहता है और दूसरा अर्थ है कि जिसका धर्म भी हिन्दू है। अगर दोनों अर्थ अच्छी तरह से समझे जाएँ तो दोनों में टकराव नहीं और आज मैं सोच रहा हूँ कि मैं भी चाहता हूँ कि हिन्दू ज्यादा ताकतवर बनें और मैं यह समझता हूँ कि यह मैं मुसलमान की हैसियत से कह रहा हूँ क्योंकि मैंने इस कसौटी पर रखा कि अगर मैं मुसलमान होता तो क्या कहता, तो यही बात कहता। क्योंकि दोनों मतलब हैं, दोनों मतलब से मजबूत होना चाहिए।

भारतवर्ष ही आर्यों की मूल भूमि है

–संदीप आर्य

नवभारत टाइम्स (मुम्बई) में सितम्बर 2014 में एक खबर छपी 'भारत के अतीत के बारे में दिल्ली यूनिवर्सिटी इतिहास की किताबें नए सिरे से लिखने के एक प्रोजेक्ट पर काम करेगी। इतिहास की किताबों में लिखा हुआ है कि करीब 3500 साल पहले विदेशी आर्यों के कबीले पहाड़ों को पार कर भारत आए।' किन्तु यदि हम प्राचीनतम इतिहास व अन्य शास्त्रों को पढ़ें, पुराने दस्तावेजों व लेखों को खंगालें तो उक्त विदेशी धारणा गलत साबित हो जाती। यह बात तो सत्य ही है कि आर्य जाति ही भारत देश की प्राचीनतम मूल जाति थी। किन्तु अंग्रेजों की गलत नीतियों एवं शिक्षा प्रणाली के कारण उन्होंने हमारे इतिहास में अनेक मिथ्या जानकारियाँ लिख दीं तथा उन्होंने हमें हमारे ही देश में विदेशी बना दिया।

वेद विश्व का प्राचीनतम धार्मिक ग्रन्थ माना जाता है जिनका दर्शन-प्रवचन भारत के ऋषियों द्वारा किया गया। ये ऋषि आर्यों के आदि पूर्वज माने जाते हैं अतः आर्य ही भारत के पूर्वज सिद्ध होते हैं। वेद में कहीं भी उल्लेख नहीं है कि हम विदेशी थे। वेद के बाद दुनिया का प्राचीनतम ग्रन्थ मनु महाराज द्वारा रचित मनुस्मृति है उसमें लिखा है-

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशाद् अग्रजन्मनः,
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः।

इसका भावार्थ यह हुआ कि प्राचीन काल में इसी आर्यावर्त देश में उत्पन्न विद्वानों से समस्त विश्व के लोग शिक्षा व ज्ञान प्राप्त किया करते थे। आर्यों के रहने वाले इस देश को आर्यावर्त कहकर पुकारा जाता था। इस प्रकार आर्य इस भूमि के मूल निवासी हुए।

वाल्मीकि रामायण का रचनाकाल कई हजार वर्ष पूर्व का माना जाता है। यह संस्कृत का महाकाव्य भी है। आर्यों की मूल भाषा संस्कृत थी, अतः यह ग्रन्थ आर्यों का ऐतिहासिक

ग्रन्थ हुआ। इस दृष्टिकोण से भी आर्यों को ही देश की मौलिक नागरिकता प्राप्त होती है। रामायण में वर्णित सभी नगर व प्रान्त भारत के ही हैं, इतर नहीं।

रामायण में राम ने कई बार लक्ष्मण के लिए 'आर्य' शब्द का प्रयोग किया। स्वातन्त्र्य वीर सावरकर ने अपनी पुस्तक 'हिन्दुत्व' में लिखा है- 'महान् प्रतापी राजा राम ने अपनी विजय पताका हिमगिरि से महासागर तक फहराई तथा उन्होंने समस्त भारत में अपना सार्वभौम राज्य स्थापित किया।'

महाभारत काल जो कि 5000 वर्ष पुराना माना जाता है, उस महाभारत युद्ध में भारत की ही भौगोलिक सीमाओं का वर्णन आता है। स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने अपनी पुस्तक 'सत्यार्थप्रकाश' में लिखा है कि उस महाभारत काल में चीन, अमेरिका, यूरोप, यूनान, ईरान आदि देशों के राजाओं ने यहाँ आकर राजसूर्य यज्ञ में भाग लिया। वे लिखते हैं कि स्वायम्भुव राजा से लेकर पाण्डव पर्यन्त भारत में आर्यों का ही चक्रवर्ती राज्य रहा। मैत्रेयी उपनिषद् में भी लिखा है कि सृष्टि से लेकर महाभारत पर्यन्त भारत में आर्यकुल के अनेक चक्रवर्ती राजा हुए। भारत के प्रथम राजा से लेकर भरत तक ने भारत पर राज्य किया। इससे स्पष्ट है कि आर्यों का भारत पर राज्य हजारों लाखों वर्ष पुराना है। राजा भरत आर्यकुल के सुप्रसिद्ध राजा हुए, उसी के नाम से हमारे देश का नाम आर्यावर्त से भारतवर्ष पड़ा। इनका राज्य काल महाभारत से भी अनेक वर्ष पूर्व का था तो अंग्रेजों की धारणा कि आर्य लोग 3500 वर्ष पूर्व भारत आए, गलत साबित हो जाती है क्योंकि महाभारत काल का ही समय आज से 5000 वर्ष पूर्व का है। किसी भी राज्य में जब वहाँ के लोग निवास करते हैं तो वे उस राज्य का कोई नाम रखते हैं। यदि कोई भारत को द्रविड़ों का देश मानता है तो बतलाए कि द्रविड़ों ने भारत का क्या नाम रखा था? इस प्रश्न का उत्तर किसी के पास

नहीं है। द्रविड़ लोग इस देश का नाम आर्यावर्त अथवा भारतवर्ष तो नहीं रख सकते। यदि उन द्रविड़ों के देश का कोई अपना नाम नहीं, उनका कोई प्रामाणिक इतिहास नहीं, कोई अपना धर्म ग्रन्थ नहीं, कोई साहित्य नहीं, तो किस आधार पर हम भारत को द्रविड़ों का देश मान सकते हैं। इसी प्रकार जब कोई मानव जाति अपना मूल देश छोड़कर अन्य देश में जाकर विस्थापित होती है तो भी वह जाति अपने मूल देश को कभी नहीं भूलती, उसे सदा स्मरण करती है। पारसी लोग अपने देश फारस को छोड़कर भारत में आकर बसे, आज 800 वर्ष बाद भी उन्हें अपना मूल देश स्मरण है। फिर आर्यों को अपने मूल देश का कोई इतिहास अवशेष क्यों नहीं? अतः आर्यों को विदेशी मानना, दिन को रात मानने के समान हठ करना है।

मोहन जोदाड़ो सभ्यता की खुदाई में मिली मोहर (सील) भी हमारे प्राचीनतम धार्मिक ग्रन्थ ऋग्वेद के प्रथम अध्याय के 164.20 मंत्र में वर्णित वृक्ष पर बैठे दो पक्षियों के दृश्य से हूबहू मेल खाती है अतः सिद्ध होता है कि वैदिक सभ्यता मोहन जोदारो से पूर्व की सभ्यता है।

मनुस्मृति में आर्यावर्त (भारत) की भौगोलिक सीमाओं का वर्णन किया गया है- 'उत्तर में हिमालय तथा दक्षिण में विंध्याचल पर्वत, पश्चिम में सरस्वती तथा पूर्व में ब्रह्मपुत्र नदी बहती है, उस देशका नाम आर्यावर्त है।

वीर सावरकर ने 'हिन्दुत्व' में स्पष्ट लिखा है- 'यह सुनिश्चित है कि आज के विश्व में प्राचीन मिस्र तथा बैबीलॉन की प्राचीन सभ्यताएँ सुविख्यात हैं। जब उनका नाम भी किसी ने कहीं सुना था तब भी पवित्र सिन्धु-सलिल की पावन कलकल ध्वनि के साथ अग्निहोत्र के यज्ञ-धूम्र की सुगन्ध प्रवाहित हुआ करती थी और यह महान् सिन्धु नदी तट वेदों के पावन घोष से गुंजित होता था जिससे आर्य जनों के अन्तःकरण में

आध्यात्मिक पुनीत ज्योति प्रज्ज्वलित होती थी।'

भारतीय ही नहीं, कई पाश्चात्य विद्वान् भी भारत को ही आर्यों की मूल भूमि मानते हैं। 1975 में ऑक्सफोर्ड में छपी पुस्तक 'द अर्ली आर्यन' में टी बुरो ने स्पष्ट किया है-

'The Aryan invasion of India as mentioned is no recorded document and it can't be traced archeologically'.

अमेरिका के इतिहास वेत्ता डॉ. मिल्टन सिंगर कहते हैं- 'आर्य एवं द्रविड़ों के युद्ध का कोई वैज्ञानिक आधार नजर नहीं आता।'

एक और इतिहासकार एलफिन्स्टन ने 'हिस्ट्री ऑफ इण्डिया' पुस्तक में लिखा है- 'वेद में, मनुस्मृति में अथवा अन्य किसी पौराणिक संस्कृत ग्रन्थ में आर्यों को भारत के अलावा और किसी देश का निवासी नहीं बताया गया है।'

भारत में अंग्रेजों ने अपना साम्राज्य सुदृढ़ करने हेतु, यहाँ के स्वर्णिम इतिहास, महान् धार्मिक ग्रन्थों, सभ्यता, संस्कृति व प्राचीन शिक्षा पद्धति को नष्ट-भ्रष्ट करने का पूरा प्रयास किया। इस कार्य में मैक्समूलर तथा मैकॉले जैसे विद्वानों ने अपनी अहं भूमिका निभाई। उन्होंने यहाँ के गौरवशाली इतिहास को बदलने का भरसक प्रयास किया और वे इस कुकृत्य में सफल भी हुए।

किन्तु कहावत है कि सुबह का भूला शाम को घर वापस आ जाए तो भी वह भूला नहीं कहलाता। आज आजादी के 69 वर्षों के बाद भी यदि हमारी सरकार इस नेक कार्य को करने का संकल्प करती है तो वह बधाई की पात्र है। इससे हमारा खोया हुआ स्वर्णिम इतिहास पुनर्जीवित होगा और हमारा सोया हुआ स्वाभिमान पुनः जागृत होगा।

वैदिक मिशन मुम्बई

भारतीय संस्कृति की विशेषताएँ

–आचार्य नरदेव शास्त्री 'वेदतीर्थ'

[गुरुकुल ज्वालापुर के संस्थापक सुविख्यात वैदिक विद्वान आर्यसमाजी चिन्तक तथा स्वाधीनता सेनानी स्व. आचार्य नरदेव शास्त्री 'वेदतीर्थ' जी एक गम्भीर चिन्तक थे। उनका यह चिन्तनपरक लेख भारतीय संस्कृति की विशेषताओं पर सम्यक् रूप से प्रकाश डालने में सक्षम है।]

सम्पादक

हमारी संस्कृति की कई विशेषताएँ हैं जो अन्य धर्मों में नहीं पाई जातीं। अनन्तकाल के प्रवाह से हमारी जाति में एक ऐसा रक्त बह रहा है, जिस प्रवाह को अब तक कोई नहीं रोक सका। एक सहस्र वर्ष की दासता, परचक्र, सैकड़ों उलट-फेर भी इसे न रोक सके। चाहे कुछ भी हुआ, कुछ भी देखना पड़ा पर हमारी जाति में निम्नलिखित गुण तो किसी न किसी रूप में रहे ही हैं।

आस्तिकता

चाहे हम अपने पूर्वजों जैसे उत्कृष्ट कोटि के आस्तिक न रहे हों तथापि आस्तिक रहे हैं अवश्य, आस्तिक हैं अवश्य और आस्तिक रहेंगे अवश्य। नहीं तो, इतनी बड़ी सुदीर्घ कालीन दास्ताँ में हम जीवित कैसे रह सके-यही आश्चर्य है।

इस हमारी अस्ति-बुद्धि को कोई नहीं मिटा सका। हमारे अन्दर ईश्वर-विश्वास बराबर बना रहा। इस संसार का कर्ता, धर्ता, हर्ता, कोई अवश्य है जिसके संकेतमात्र से त्रिभुवन तथा लोक-लोकान्तर बनते हैं, बने रहते हैं और अन्त में बिगड़ जाते हैं। उत्पत्ति से लेकर प्रलय तक की गाथा न जाने कब से चली आई है। उस परमात्मा के अभिध्यानमात्र

से प्रलय में बिखरे पड़े हुए अनन्त परमाणुओं में जीवन-संचार होने लगता है। प्रलयावस्था में पड़ी हुई मूल-प्रकृति की ओर चल पड़ती है और अन्त में यह विराट बनता है-

श्वेताश्वतर-उपनिषद् में स्पष्ट कहा है कि ऋषियों ने ध्यानावस्थित होकर साक्षात्कार किया-

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।।

हमारी हिन्दू जाति आर्य जाति उसी विश्वव्यापी, सर्वभूतान्तरात्मा, सर्वभूतनिगूढ़ देव में विश्वास रखती चली आई है। यह और बात है कि उसको जानने के अनेक उपाय वेदों में, स्मृतियों में, धर्म-शास्त्रों में बतलाये गये हैं। भिन्न-भिन्न उद्देश्यों से प्रवृत्त हुए दर्शनशास्त्र भी अन्ततोगत्वा उसी की बात पर एकमत हो जाते हैं-यह एक हिन्दू जाति की विशेषता है और इसी विश्वास के आश्रय से यह जीवित रही है।

मोक्ष जीवन का विशेष उद्देश्य

दूसरी एक विशेषता इस विश्वास की रही है कि जीवों के इस संसार में आने का विशिष्ट उद्देश्य है और इस जगत के चलने-बिगड़ने का भी एक विशिष्ट उद्देश्य है। यह है--भोगापवर्गार्थ दृश्यम्।

यह दृश्य जगत इसीलिये चला है कि जीव अपने-अपने कर्म-फलानुसार इस संसार में आए कर्म फलों को भुगतें और प्रयत्न करते-करते अपवर्ग तक पहुँचें। यद्यपि अपवर्ग (मोक्ष) प्रत्येक के बूते की वस्तु नहीं है, तथापि पहुँचने वाले वहाँ पहुँच ही जाते हैं-कितने? कौन कह सकता है। कब? कौन कह सकता है?

अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्।।

-की बात सर्वविदित ही है। जीवन अपने कर्मानुसार विविध योनियों में होकर अन्त में मनुष्य योनि में आकर, यहीं से प्रयत्न करते-करते अपवर्ग तक पहुँच जाते हैं। उत्तम

आचरण वाले उत्तम योनियों को प्राप्त करते हैं, निकृष्ट आचरण वाले निकृष्ट योनियों को। इस सिद्धान्त को हम मानते चले आये हैं। यही कारण है कि हम किसी भी दशा मे रहें, किसी भी दशा में पहुँचें, समाधानपूर्वक कर्मफलों को भुगतने की मनोभूमिका रखते हैं। इस जाति के जीवित रहने का दूसरा यह कारण है।

ईश्वरीय न्याय में विश्वास

तीसरी विशेषता यह रही है कि हम इस ईश्वरीय न्याय में अटल विश्वास रखते चले आये हैं। हम पर कैसी भी बीती, हम इसी विश्वास पर अधिकतर जीवित रह सके हैं। ये दुःख क्यों आये? अपने कर्मों का फल। ये सुख क्यों आ रहे हैं। अपने कर्मों का फल। यही हिन्दू जाति की मनोभावना रही है। हमने अपने कर्मानुसार प्राप्त सुख-दुःखों के लिये अन्य किसी को दोष देने की बात सीखी ही नहीं।

कर्म फल पर विश्वास

चौथी विशेषता अपने कर्मफलों पर दृढ़ विश्वास की है। जब हमने अच्छे अथवा बुरे कर्म किये हैं तब इनका फल दूसरा कौन भुगतेगा, हमको छोड़कर। यह बात हमारी जाति के हृदयान्तस्तल में गड़ी हुई है।

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्।

फलदाता वही परम कारुणिक भगवान है जिनके न्याय में भी दया रहती है। इसलिये हिन्दू जाति में किसी के सुख को देखकर डाह नहीं होती, बल्कि दूसरे के दुःखो को देखकर दया करुणा उत्पन्न होती है।

प्राणिमात्र में आत्मदर्शन

हिन्दू जाति की पाँचवीं विशेषता यह है कि यह सब प्राणियों में आत्मैकत्व को देखती रही है। इसका फल यह हुआ कि

हिन्दू अन्यों के सुख-दुःखों को अपने सुख-दुःख की दृष्टि से देखता चला आया है। गीता में भी इसी समबुद्धि पर बल दिया गया है। हिन्दू जाति जीवों की ऊपरी विषम दशा को देखकर कभी नहीं घबराती। वह तो अन्तरात्मा-समता की दृष्टि रखती रही है।

सारांश हमारी हिन्दूजाति कौड़ी मूल्य की नहीं रहती, यदि उसमें यह अध्यात्म-दृष्टि, सर्वभूतैकत्व अथवा सर्वात्मैकत्व की दृष्टि न रहती। वर्तमान अध्यात्म शून्य दृष्टि वाले एकमात्र भौतिक उन्नति के लोलुप पाश्चात्य राष्ट्र अथवा पाश्चात्य विज्ञानविद् यही तो भूलते हैं और बनाने की बात कहते रहते हैं। इनके पास भीतरी समता को देखने के लिये न आँखें हैं न और कुछ इसीलिए कोरा विज्ञान, अध्यात्म शून्य विज्ञान भी इनको नहीं तार रहा है। नारद क्या कम विज्ञानी थे? किन्तु आत्मतत्व को जानकर ही सुखी हुए। आत्मज्ञान के बिना उनकी सब विद्याएँ, ज्ञान-विज्ञान निरर्थक सिद्ध हुए। पाश्चात्य विज्ञानवादी सांसारिक तुच्छ पदार्थों में ही सुख मान रहे हैं और अध्यात्म दृष्टि के न रहने से-

यो वै भूमा तत्सुखं नाल्पे सुखमस्ति।
भूमा स्वेव विजिज्ञासितव्यः।

इस भूमातत्व (आत्म-परमात्म तत्व) को न जानकर भटक रहे हैं। अन्त में भटक-भटक कर इनको भी हमारे मार्ग पर ही आना पड़ेगा।

फिर प्रश्न हो सकता है कि हिन्दू जाति में ऐसे-ऐसे गुण थे तो यह एक सहस्र वर्ष पर्यन्त दासता में क्यों फँसी रही? उत्तर यह है कि ईश्वर ने किसी जाति को कोई किसी प्रकार का ताम्रपट्ट तो दे नहीं रखा कि वही जाति संसार में सदैव के लिए सर्वोपरि रहेगी। जलयन्त्र चक्रवत् (रहट) उन्नति तथा अवनति के चक्र नीचे ऊपर होते ही रहते हैं। इस

नियम का हमारी हिन्दू जाति ही अपवाद क्यों बनी रहती। हमारे पास इतना ऊँचा धर्म, इतनी ऊँची संस्कृति, इतनी अनुकरणीय सभ्यता। इतना ऊँचा साहित्य रहते भी हम डूबे इसीलिए कि हमारी धर्म विषयक भावनाएँ दुर्बल पड़ गई थीं। भीतरी संस्कार तो थे पर वे दुर्बल पड़ गए थे। किन्तु भावनाएँ सर्वथा नष्ट नहीं हुई थी। संस्कार सर्वथा नष्ट नहीं हुए थे और उपर्युक्त विशेष गुण रक्त-परम्परा में इतने घुल-मिल गए थे कि वे पृथक न हो सके। इसीलिए हम जीवित रह सके। हमारे पापों का उदय तो होना था किन्तु पुण्य सर्वथा निःशेष नहीं हो पाये थे। शनैःशनै पापों का भुगतान होता गया, जो बुरे दिन कभी भी हमारे पूर्वजों ने नहीं देखे थे, वे सब हमने देखे। अन्त में पुण्यशेष उभरा- हम स्वतन्त्र हो गये। हमारे स्वतन्त्र हो जाने पर भी यह पाप अभी शेष है कि यह राज्य 'धर्मनिरपेक्ष' है। हमारा राज्य कभी 'धर्मनिरपेक्ष' नहीं रहा। यह वर्तमान 'धर्मनिरपेक्ष' राज्य तो केवल पाश्चात्य अध्यात्मशून्य भौतिकवादियों का अनुकरण मात्र है। हमारा धर्म केवल निःश्रेयस की बात नहीं कहता और न केवल भौतिकवाद की बात कहता है। हमारे ऋषि तो कहते हैं कि जिससे अभ्युदय और निःश्रेयस दोनों की सिद्धि हो वह धर्म है।

हम स्वतन्त्र हुए सही, अब इस स्वतन्त्रता के आश्रय से हमें पुनः इस भारत में भारतीय ढंग की संस्कृति लानी है। इसीलिए वर्तमान राज्य प्रणाली में भी देश काल धर्मानुरूप कतिपय अभीष्ट परिवर्तन करने पड़ेंगे।

वर्तमान पाश्चात्य प्रजातंत्र प्रणाली का अनुकरण युगधर्म हो सकता है पर उसका भारत में अंधानुकरण करके हम सुखपूर्वक न रह सकेंगे। जिस युग में हम विचर रहे हैं वह एक संक्रमणात्मक युग है जिसमें स्थिरता भी नहीं, गम्भीरता

भी नहीं। एक शिक्षा की ही बात लीजिए-

वर्तमान समय में जिस प्रकार की शिक्षा दी जा रही है, उससे भारत का चरित्र कभी सुधरेगा- ऐसी आशा रखना दुराशामात्र है। मुझ जैसे प्राचीन शिक्षाभिमानी को इस युग में यह प्रतीत हो रहा है कि अन्धकार ने प्रकाश को ललकारा है कि- 'आ' जरा ठहर तेरी खबर लूँ। अब तक तो तूने मुझे बहुत परेशान कर रखा था और संसार में मुझे छिपने के लिए स्थान तक नहीं छोड़ा था। अब इस युग में मैं तेरे लिये कोई स्थान नहीं छोड़ूँगा।' ऐसा प्रतीत हो रहा है कि प्रकाश अपने प्राण बचाकर भाग रहा है और अन्धकार उसका पीछा कर रहा है। यदि भारत में भारतीयता का अन्त हो गया तो हम स्वतन्त्र होकर भी स्व-स्वरूप भूलकर क्या जीवित रहेंगे?

भारत का नाम बिगड़ जाए और रूप भी बिगड़ जाए तो नामरूप दोनों के बिगड़ जाने से भारत का क्या शेष रह जायेगा। अब तक तो भारत का किसी प्रकार नाम चला जा रहा है। रूप में सहस्र वर्ष से विकृत होता चला आ रहा था। अब इस विकृत रूप को मिटाकर पूर्ववत् सुन्दर-मनोहारी रूप बनाने के लिए समस्त प्रयत्न होने चाहिए। पर क्या किया जाए। कभी यह वर्तमान प्रजातंत्र प्रणाली प्रत्यक्ष रूप से अर्थात् स्पष्ट रूप में आर्य धर्म, आर्य संस्कृति, आर्यसभ्यता की पोषक और पालक बन सकेगी, ऐसी आशा करना दुराशामात्र होगी। आर्यजाति-उद्धार के लिये इस पद्धति की सरकार कभी कटिबद्ध न हो सकेगी। जब शिक्षा-संस्था में ही धर्मशिक्षा को प्रतिष्ठित अधिष्ठान नहीं मिल रहा है, तब क्या होगा- यह एक चिन्तनीय विषय बन गया है। जब छात्र-छात्राओं की सह-शिक्षा का अनर्थकारी परिणाम भी

हमारी समझ में नहीं आ रहा है, तब क्या कहा जाये? जबकि गोहत्यानिषेध की बात भी अब तक हमारी समझ में नहीं आ रही है तब क्या समझा जाये कि हम किधर जा रहे हैं। हम लोग आज यदि भारतीय धर्म का अध्ययन करते हैं, तो पाश्चात्य दृष्टि से करते हैं। भारतीय धर्म की उत्तमता स्वीकार करने के लिये भी हमें पाश्चात्य-दृष्टि चाहिए। भारतीयों के रोगों की औषधियों को मँगाने में करोड़ों रुपये खर्च करते हैं, तब तो बड़ा विस्मय होता है। महात्मा गाँधी ज़ी जीते जी महा घोष कर गये कि मशीन युग को समाप्त करो, पर हम करोड़ों रुपयों की मशीने लगाते ही चले जाते हैं। राज्यशासन चक्र अभी तक विलायती ढंग के ही हैं- खाली, उनको चलाने वालों के गोरे रंग हाथ बदल कर हमारे काले हाथ लग रहे हैं। एक ओर बेकारी-बेकारी चिल्लाते हैं, दूसरी ओर स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालयों द्वारा अस्वाभाविक, अभारतीय, अनुपयोगी शिक्षा द्वारा बेकारी को बढ़ाते ही चले जा रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि अभी तक हमारे भारतीय नेता शिक्षा की जटिल समस्याओं को सुलझाने में समर्थ नहीं हो सके हैं। वैसे ये नेता एक स्वर से वर्तमान शिक्षा-दीक्षा की बुराई करते हुए सुने जाते हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि अंग्रेजी राज्य तो गया किन्तु अंग्रेजी शिक्षा-दीक्षा हमारे मस्तिष्क में ठोक-ठाककर इतनी गहरे में बैठा दी गई है कि हमें भारतीय दृष्टिकोण ही समझ में नहीं आ रहा है। भारतीय धर्म और संस्कृति को बैल गाड़ी की उपमा देकर उपहास किया जाता है और पाश्चात्य देश की निकम्मी से निकम्मी वस्तु को मोटर कार की उपमा दी जाती है। जहाँ हम भारत के स्वतन्त्र होकर विचरने की बात

को पुण्य की बात समझते हैं, वहाँ उपर्युक्त प्रकार की बातों को देखकर समझ रहे हैं कि अभी पाप भी अधिकांश में शेष हैं जिनका दूर होना आवश्यक है।

फिर क्या निराशा-ही निराशा है? आशा के संचार के लिये स्थान नहीं है?

है क्यों नहीं, जिस करुणा निधान भगवान ने स्वतन्त्रता दिलाई, वही आगे भी वर्तमान परिस्थितियों के रहते हुए भी उन्हीं में से ऐसी विचित्र परिस्थिति उत्पन्न करेगा जिससे भारत अपने अभीष्ट पथ की ओर अग्रसर होता जायेगा। इस कार्य में देर अवश्य है, पर अन्धेर नहीं।

भारत वर्ष की धर्म प्राण जाति को इस कार्य में अपेक्षित त्याग-तपस्या करनी ही पड़ेगी। संस्कृत के विद्वान जिन्होंने आज तक संस्कृत विद्या के रक्षार्थ कुल परम्परा द्वारा प्रयत्न किये, उनको पुनः एक बार त्याग तपस्या का मार्ग अपनाना पड़ेगा, तब कहीं संस्कृत-विद्या की रक्षा हो सकेगी। हमारी सरकार के पास अंग्रेजी शिक्षा-दीक्षा के लिए करोड़ों, अरबों रुपये हैं पर संस्कृत के लिए जिसके आश्रय से आज तक भारतीय धर्म, संस्कृति, सभ्यता, जीवित रही-पैसा नहीं है। संस्कृत विद्या के लिए आस्था नहीं, श्रद्धा नहीं। हमारे ही उत्तरप्रदेश में धनाभाव के कारण लगभग 1500 संस्कृत पाठशालाएँ तथा विद्यालय आधे मुरझा गये हैं। काशी, जो कि किसी समय संस्कृत-विद्या का गढ़ था, अब वह भी मुरझा चला है। जब संस्कृत के केन्द्र ही मुरझा रहे हैं तब भारतीय संस्कृति ही कहाँ रहे और कहाँ श्वास-प्रश्वास ले-धर्मो रक्षति रक्षितः यही सत्य है।

(FORM IV) STATEMENT ABOUT OWNERSHIP AND OTHER PARTICULARS ABOUT "BRAHMARPAN"

Place of Publication and Address	:	New Delhi, C2A/58, Janakpuri, New Delhi-110058.
Periodicity	:	Monthly, A bi-lingual publication (Hindi and English)
Printers' name, citizenship and Address	:	B.D. Ukhul, Indian, C2A/58, Janakpuri, New Delhi-110058
Publishers' name, citizenship and Address	:	B.D. Ukhul, Indian, C2A/58, Janakpuri, New Delhi-1100058.
Editor's name, citizenship and Address	:	Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar, Indian, C2A/90, Janakpuri, New Delhi-110058.
Name and Address of owner	:	M/s. Brahmasha India Vedic Research Foundation, C2A/58, Janakpuri, New Delhi-110058.
Printing Press	:	Friends Printofast 6, A5B/A5C Market, Janakpuri, New Delhi-110058.
DCP License No.	:	F2(B-39) Press/2007

I, B.D.Ukhul, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

31.03.2017 Sd/- B.D.Ukhul

BRAHMASHA INDIA VEDIC RESEARCH FOUNDATION ACKNOWLEDGES WITH THANKS RECEIPT OF THE FOLLOWING DONATION.

1. Shri M.R. Thapliyal, C2A/134, Janakpuri, New Delhi-58 Rs. 500/-
2. Shri M.L. Kalra, A2/157, Janakpuri, New Delhi-58 Rs. 501/-

Donations to the Foundation are eligible for Tax Exemption under Section 80G of the Income Tax Act 1960 Vide No.DIT(E)1/3313/DELBE 21670-2503210 dated 25.03.2010

Date of Pubn. : 31.3.2017 Posted at - NIE - H.O. Postal Date : 2-3 Apr. 2017
RNI Reg. No. DELBIL/2007/22062 Postal Regd. No. DL(W) 10/2143/2017-2019

भूभुर्वः स्वः सुप्रजाः प्रजाभिः स्यां सुवीरो वीरैः सुपोषः पोषैः।
नर्य प्रजां मे पाहि। शंस्य पशून् मे पाहि। अथर्य पितुम्मे पाहि।।
(यजु.3/37)

अर्थ–हे मंगलकारी ईश्वर आप 'भूः' सदा वर्तमान हो। 'भुवः' वायु आदि पदार्थों के रचयिता हो। 'स्वः' आनंद स्वरूप हो। आप हमें तीनों लोकों का सुख दीजिए। आपकी कृपा से मैं पुत्र–पौत्र आदि उत्तम गुणों वाली प्रजा से युक्त होऊँ। 'सुवीरः' सर्वोत्कृष्ट वीर योद्धाओं से युद्धमें विजयी होऊँ। हे पुष्टिदाता प्रभु, आपकी कृपा से सोम आदि औषधियों से सुपुष्ट होऊँ। हे 'नर्य' मनुष्यों के हितकारक प्रभो! मेरी प्रजा की रक्षा करो। हे 'अथर्य' व्यापक ईश्वर मेरे अन्न की रक्षा करो। हे दयानिधि, आप हमें उत्तम पदार्थों से परिपूर्ण कीजिए और सदा आनन्दित रखें।

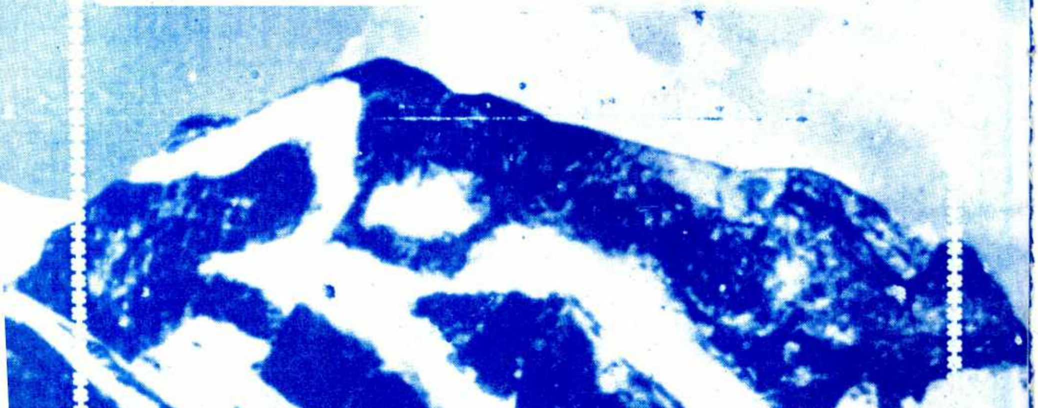

Oh Almightly God. You are enternal and ever existent. You are the Creator of those spheres of existence which abound in happiness. May we have excellent families with worthy progenies. May we have reasoned and valiant soldiers. May we be strong with nourishing diet. Oh wellwisher of man. Kindly protect our men. Oh Lord, Ever worthy of Praise do look after our animals. Oh Omnipresent God, do protect our victuals.

Printed by - Friendsprintofast, New Delhi-58